संपादकीय

आईए थोडा बदलते हैं...

आठ मार्च को निरंतर महिला दिवस मनाया जाता है और महिला के सशक्त होने की कई सारी दलिले दी जाती हैं। निश्चित ही स्त्री के सशक्त होने पर मुझे वाकई गर्व है। अदभुत है उसका स्नेह, उसका समर्पण, उसका संघर्ष और उसका संग्राम। पर जब मैं अपने आसपास देखती हूँ, अपने परिवार में देखती हूँ तो मेरे मन में सवाल अवश्य उठता है कि आज के समय में भी स्त्री जितना दिखती है और दिखाती है क्या सचमुच उतनी स्वतंत्र है? मध्यवर्गीय कामकाजी महिलाओं की जद्दोजहद आज भी वैसी ही है जैसी पहले थी आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र होने पर भी वह आत्मनिर्भर कहां है? एक ओर जहाँ सुरक्षा, संस्कृति, नैतिकता और परंपरा के ज़ंजीरों में जकडकर उसे फंसाया जाता है तो दूसरी तरफ उसका तो परिवार में अपने A+ होने का या बनाए रखने का संघर्ष चल ही रहा है। A+ से मेरा अभिप्राय उसके अपने बेटी से लेकर दादी या नानी होने तक के हर रिश्ते में खरा उतरने से हैं। अगर वह A+ से B+ या B में आ जाती है तो उसकी सक्षमता पर भले ही खुलकर प्रश्न न उठाए जाए फिर भी उसकी सक्षमता की तुलना अवश्य की जाती है। समझ नहीं आता क्यों नहीं उसे कभी B+ या B में आने नहीं दिया जाता है? यह नज़रिया केवल पुरुषों का नहीं है घर में हर एक सदस्य का होता है। उसके वर्किंग प्लेस में बॉस से लेकर चपरासी तक का होता है। महिला दिवस पर अगर कुछ कहना चाहिए तो आज इस नज़रिए के बदलने को लेकर कहना चाहिए। इस बात को समझ लेना चाहिए कि आधी आबादी अगर स्त्री है तो आधी आबादी पुरुष भी तो है, और दोनों एक दूसरे के पुरक है प्रतिस्पर्धी नहीं। दोनों को एक दसरे के प्रति संवेदनशील होना और सम्मान का भाव रखना आवश्यक है। इस सदी में भारत में अनेक महिलाओं ने समय समय पर अपना सशक्त एवं सबल होना सिद्ध किया है और जताया है कि अगर वह जननी है तो ज्वाला भी है। जहाँ कभी रानी लक्ष्मी बाई, चेन्नम्मा, कल्पना चावला का नाम लिया जाता था तो आज निर्मला सीतारामन, बिंग कमांटर पूजा ठाकुर या फिर फाइटर प्लेन मिग-21 उड़ानेवाली अवनी चतुर्वेदी हैं। मेरा कहना यही है कि भारत जैसे देश में महिलाओं को अधिकार दिलाने में कई महान पुरुषों ने योगदान दिया है, वे नारी को एक मनुष्य की तरह समझते थे इसलिए, लेकिन उनका क्या आज भी जिनकी स्त्री के प्रति मानसिकता में कोई परिवर्तन ही नहीं है? महिला दिवस की सार्थकता केवल स्त्री के जागरुक होने में नहीं है बल्कि स्त्री के प्रति नजरिए को बदलने में हैं। आईए थोडा बदलते है खुद को... नारी को अपने भीतर की 'क्वीन' को बाहर लाना है तो पुरुषों को अपने भीतर के मनुष्य को... तभी आधी आधी आबादी एक मुक्क्मल आबादी होगी।

'**आखर**' के इस अंक में नौ शोधालेखों के साथ-साथ डॉ. स्मिता महाजन का 'मन' नामक लेख पुस्तक समीक्षा में डॉ. नंदिनी साहू की लंबी कविता " सीता", कहानी 'श्रद्धांजलि' और 'मैं काशी हूँ' और 'ऐ माटी' - डॉ.

संगीता श्रीवास्तव, 'औरत' - डॉ. मुक्ता, 'धूसर आईने'- डॉ. मुक्ता की कविताएँ शामिल हैं। आशा है आपको यह अंक पसंद आएगा। आपका स्नेह और सहयोग हमें हमेशा मिलता रहे ताकि हम **'आखर'** के माध्यम से साहित्य की सेवा कर सकें।

इति नमस्कारन्ते

प्रधान संपादिका
प्रतिभा मुदलियार